International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 03-07-2020; Accepted: 17-07-2020; Published: 04-08-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 4; 2020; Page No. 81-83

हिन्दी भाषा का उद्‌भव एवं विकास

अर्चना सौरभ
सहायक प्राध्यापिका, दिपसर कॉलेज ऑफ एडुकेशन, देवघर, झारखंड, भारत

सारांश
संसार का सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद है। ऋग्वेद से पहले भी संभव है कोई भाषा रही हो परन्तु आजतक उसका कोई लिखित रूप प्राप्त नहीं हो पाया। इससे यह अनुमान होता है कि संभवतः आर्यों की सबसे प्राचीन भाषा ऋग्वेद की ही भाषा, वैदिक संस्कृत ही थी। हिन्दी का विकास क्रम–संस्कृत, पालि–प्राकृत–अपभ्रंश–अवहट्‌ठ –प्राचीन/प्रारम्भिक हिन्दी है। हिन्दी वस्तुतः फारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है – हिन्द से सम्बन्धित या हिन्दी का । हिन्दी शब्द की निष्पत्ति सिन्धु–सिंध से हुई है क्योंकि ईरानी भाषा में ''स'' को ''ह'' बोला जाता है। इस प्रकार हिन्दी शब्द वास्तव में सिन्धु शब्द का प्रतिरूप है। आज हम जिस भाषा को हिन्दी के रूप में जानते हैं वह आधुनिक आर्य भाषाओं में से एक है। आर्यभाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संस्कृत है जो साहित्य की परिनिष्ठित भाषा थी। वैदिक भाषा में वेद, संहिता एवं उपनिषदों–वेदांत का सृजन हुआ है। वैदिक भाषा के साथ–साथ ही बोलचाल की भाषा संस्कृत थी, जिसे लौकिक संस्कृत भी कहा जाता है। संस्कृतकालीन आधारभूत बोलचाल की भाषा परिवर्तित होते–होते 500 ई0 पू0 के बाद तक बहुत बदल गई जिसे ''पालि'' कहा गया। पहली ईसवी तक आते–आते पालि–भाषा और परिवर्तित हुई जिसे ''प्राकृत'' कहा गया। बाद में प्राकृत भाषाओं के क्षेत्रीय रूपों से अपभ्रंश भाषाएं प्रतिष्ठित हुई। अपभ्रंश भाषा साहित्य के दो रूप मुख्यतः पाए गए– पश्चिमी एवं पूर्वी। 1000 ई0 के आसपास अपभ्रंश के विभिन्न क्षेत्रीय रूपों से आधुनिक आर्य भाषाओं का जन्म हुआ। इसी अपभ्रंश से हिन्दी भाषा का उद्‌भव हुआ। हिन्दी में साहित्य रचना का कार्य 1150 ई0 के बाद तकरीबन 13वीं शताब्दी में प्रारम्भ हुआ। 1800 से 1850 तक हिन्दी शब्द–भंडार मोटे तौर पर वही था जो मध्यकाल के अंतिम चरण में था। धीरे–धीरे अंग्रेजी के अधिकाधिक शब्द हिन्दी भाषा में आते जा रहे थे। 1850 से 1900 तक अंग्रेजी के और शब्दों के प्रयोग के अतिरिक्त आर्यसमाज के प्रचार–प्रसार के कारण तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ा जिससे कुछ पुराने तद्‌भव शब्द परिनिष्ठित हिन्दी से निकाले गए।

मूल शब्द: हिन्दी, भाषा, परिनिष्ठित, वैदिक, प्रतिरूप, साहित्य

प्रस्तावना
यद्‌यपि भारत में प्राचीनतम भाषिक अभिलेख हमें प्राचीन भारतीय आर्यभाषा 'हंदस' या वैदिक संस्कृत में वैदिक वाड्‌मय के रूप में उपलब्ध हैं, परन्तु विद्‌वानों की धारणा है कि भारत में आर्यों के आगमन से पूर्व आग्नेय द्रविड़ और भाट–चीनी परिवारों के लोग यहां बसे हुए थे। आर्यभाषाओं से पूर्व यहाँ इन्हीं परिवारों की भाषाएँ बोली जाती थी। भारत में मुख्य रूप से आर्य परिवार और द्रविड़ परिवार की भाषाएँ बोली जाती है। उत्तर भारत में आर्य परिवार की भाषाएँ , जिनमें संस्कृत प्रमुख एवं प्राचीन है एवं जिसकी उत्तराधिकारिणी हिन्दी को माना जाता है। निश्चित ही भारत अपनी भाषिक संरचना के इतिहास एवं भूगोल के कारण भाषा अध्येताओं के लिए अध्ययन का एक समस्यामूलक, किन्तु रोचक विषय बना हुआ है। भारत में आर्यों के आगमन से पूर्व द्रविड़ या दस्यु, निषाद या कोल मुंडा, किरात या भाट चीनी जातियों के लोग बसे हुए थे। संभवतः इन जातियों के परस्पर संसर्ग से इनकी भाषाओं पर एक–दूसरे का प्रभाव पड़ने लगा था। विद्‌वानों की मान्यता है कि भारतीय जनमानस और जनसंस्कृति को सामासिक रूप में विकसित करने में प्राचीन आर्य भाषा संस्कृत का जो योगदान रहा है वह निश्चित ही अद्वितीय है। हिन्दी भाषा का इतिहास लगभग 1000 वर्ष पुराना स्वीकार किया गया है। सामान्यतः प्राकृत की अंतिम अपभ्रंश अवस्था से ही हिन्दी साहित्य का आविर्भाव स्वीकार किया जाता है।

उस समय अपभ्रंश के कई रूप थे और उनमें सातवीं–आठवीं शताब्दी से ही पद्य रचना प्रारम्भ हो गयी थी। हिन्दी भाषा के जानकार इस अपभ्रंश की अंतिम अवस्था अवहट्‌ठ से हिन्दी का उद्‌भव स्वीकार करते हैं।

साहित्य समीक्षा
डॉ0 धीरेंद्र वर्मा (1897–1973) का मत है कि पतंजलि जो पाणिनी की व्याकरण अष्टाध्यायी के महाभाष्यकार थे, के समय में व्याकरण शास्त्र जानने वाले विद्‌वान ही केवल शुद्ध संस्कृत बोलते थे, अन्य लोग अशुद्ध संस्कृत बोलते थे तथा साधारण लोग स्वाभाविक बोली बोलते थे, जो कालान्तर में प्राकृत कहलायी।

डॉ0 भोलानाथ तिवारी (1923–1989) हिन्दी के कोशकार, भाषा वैज्ञानिक एवं भाषाचिन्तक थे। उन्होंने तत्कालीन भाषा को पश्चिमोत्तरी मध्य देशी तथा पूर्वी नाम से अभिहित किया है।

डॉ0 श्यामसुन्दर दास (सन् 1875–1945) हिन्दी के अनन्य साधक, आलोचक, विद्‌वान और शिक्षाविद् थे। उनके अविस्मरणीय कामों ने हिन्दी को उच्चतर स्तर पर प्रतिष्ठित करते हुए विश्वविद्‌यालयों में गौरवपूर्ण स्थापित किया। शब्द चयन के बारे में बाबू श्यामसुन्दर दास का मत था– 'सबसे पहला स्थान शुद्ध हिन्दी के शब्दों को, इसके पीछे संस्कृत के सुगम और प्रचलित शब्दों को, इसके पीछे फ़ारसी आदि विदेशी भाषाओं के साधारण और प्रचलित का और सबसे पीछे संस्कृत के अप्रचलित शब्दों का स्थान दिया जाए। फ़ारसी आदि विदेशी भाषाओं के कठिन शब्दों का प्रयोग कदापि न हो। डॉ0 श्यामसुंदर दास का मत है कि वेदकालीन कथित भाषा से ही संस्कृत उत्पन्न हई और अनार्यों के संपर्क का सहारा पाकर अन्य प्रांतीय बोलियाँ विकसित हुई। संस्कृत ने केवल चुने हुए प्रचुर प्रयुक्त, व्यवस्थित, व्यापक शब्दों से ही अपना शब्द भंडार भरा पर औरों ने वैदिक भाषा की प्रकृति स्वछन्दता को भरपेट अपनाया। यही उनके प्राकृत कहलाने का कारण है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी (सन् 1907–1979 ई0) ने हिन्दी को ग्राम्य अपभ्रंश का रूप माना है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व

वस्तुतः कोई भी भाषा सामाजिकता का आधार है। मनुष्य के समस्त चिंतन व उपलब्धियों का आधार भाषा ही होती है। भाषा का मूल कार्य है संप्रेषण। जब हम हिन्दी भाषा शब्द का व्यवहार करते हैं तब हमारे समक्ष तीन अर्थ होते हैं। एक – ऐसी भाषा, जिसका उत्तर भारत के लोग सामान्य बोलचाल में इसका प्रयोग करते हैं। दो – मानक हिन्दी, जो साहित्य व संस्कृति का प्रतीक है। तीन– जो भारत की राजभाषा है और जिसका प्रयोग सरकारी काम–काज के लिए किया जाता है। हिन्दी भाषा का क्षेत्र हिमालय से विन्ध्यांचल व राजस्थान से बंगाल तक माना जाता है। इस वर्तमान शोध की बहुत आवश्यकता एवं महत्व है क्योंकि यह शोध हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। यह शोध अध्येताओं में हिन्दी के प्रति जागरूकता लाएगी, ऐसी अपेक्षा की जाती है।

शोध विधि : यह वर्तमान शोध द्वितीयक स्त्रोतों जैसे किताबें, लेखों, पत्रिकाओं, निबंधों, विश्विद्यालय–समाचार–पत्रिकाओं, विशेषज्ञ रायों एवं वेबसाइट के गुणात्मक तथ्यों के संग्रहण पर आधारित है। शोधार्थी ने अपने शोध के लिए वर्णनात्मक ..... विश्लेषणात्मक विधि अपनाया है।

परिणाम एवं चर्चा

'हिन्दी' जिस भाषा – धारा के लिए विशिष्ट दैशिक एवं कालिक रूप का नाम है, भारत में उसका प्राचीनतम् स्वरूप संस्कृत माना जाता है। संस्कृतकालीन बोलचाल की भाषा विकसित होते–होते 500ई0 पू0 के बाद 'पालि' का आगमन हुआ। बौद्ध ग्रंथों में पालि का जो रूप मिलता है। वह बोलचाल की भाषा का ही शिष्ट एवं मानक रूप था। इसकाल में क्षेत्रीय बोलियों की संख्या चार थी – पश्चिमोत्तरी, मध्य देशी, पूर्वी और दक्षिणी। पहली ईसवी तक आते–आते यह बोलचाल की भाषा परिवर्तित हुई तथा 'प्राकृत' नाम से इसे अभिहित किया गया । इसकाल की प्रमुख क्षेत्रीय बोलियां शौरसेनी, पैशाची, व्राचड़, महाराष्ट्री, मागधी एवं अर्धमागधी थी। प्राकृत से विभिन्न क्षेत्रीय अपभ्रंशों का विकास हुआ।

आज के प्राप्त अपभ्रंश–साहित्य में मुख्यतः पश्चिमी तथा पूर्वी दो ही भाषा रूप मिलते हैं। अपभ्रंश को यदि प्राकृत नाम से अभिहित करें तो आधुनिक आर्यभाषाओं का जन्म अपभ्रंश के विभिन्न क्षेत्रीय रूपों में इसप्रकार माना जा सकता है : शौरसेनी– पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, पहाड़ी, गुजराती, पैशाची–लहंदा, पंजाबी

व्राचड़ – सिन्धी

मागधी – बिहारी, बांग्ला, उड़िया, असमिया

अर्द्धमागधी – पूर्वी हिन्दी

महाराष्ट्र– मराठी

अर्थात हिन्दी भाषा का उद्भव अपभ्रंश के शौरसेनी, अर्धमागधी एवं मागधी रूपों में हुआ है। 1100 ई0 तक आते–आते अपभ्रंश का काल समाप्त हो गया और आधुनिक भारतीय भाषाओं का युग प्रारम्भ हुआ। अपभ्रंश के विभिन्न क्षेत्रीय स्वरूपों से आधुनिक भारतीय भाषाओं–उपभाषाओं यथा पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी, पंजाबी, लहंदा, मराठी, बिहारी, बांग्ला, उड़िया, असमिया, पूर्वी हिन्दी आदि का जन्म हुआ। आगे चलकर पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, पहाड़ी, बिहारी तथा पूर्वी हिन्दी पाँच उपभाषाओं तथा इनसे विकसित हुई कई क्षेत्रीय बोलियों जैसे गढ़वाली, ब्रजभाषा, खड़ी बोली, जयपुरी, भोजपुरी, अवधी आदि को समग्र रूप से हिन्दी कहा जाता है। कालान्तर में खड़ी बोली अधिक विकसित होकर अपने मानक और परिनिष्ठित रूप में वर्तमान और बहुप्रचलित मानक हिन्दी भाषा के रूप में सामने आई।

भारत प्रवेश से पूर्व हिन्दी यहां स्थापित हो चुकी थी, परन्तु उसका रूप परिष्कृत नहीं था। मुसलमानों के आगमन के पश्चात् उसने साहित्यिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप ग्रहण किया। विद्वानों ने 14वीं शताब्दी से दक्षिण भारत में हिन्दी की साहित्यिक परम्परा का प्रारम्भ माना है। गोलकुंडा, बीजापुर, हैदराबाद, बहमनी राज्य को दक्षिण भारत में हिन्दी साहित्य के विशेष केंद्र के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। जिस प्रकार हिन्दी भाषा ऐतिहासिक दृष्टि तथा वर्तमान स्थिति से भारत की वास्तविक राष्ट्रभाषा है उसी प्रकार हिन्दी साहित्य अपने सच्चे अर्थों में भारत का राष्ट्रीय साहित्य है। भारत के प्रायः सभी धार्मिक और सामाजिक वर्गों के ही नहीं वरन् सभी प्रान्तों के व्यक्तियों द्वारा इसकी श्रीवृद्धि हुई है। हिन्दी में लिखित साहित्य को किसी भी प्रकार किसी प्रान्त विशेष सीमित सिद्ध नहीं किया जा सकता है। हिन्दी का प्रभूत साहित्य भारत के प्राचीन विद्या केंद्रों, धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगरों तथा राजधानियों में आज भी हस्तलिखित रूप में प्राप्त होता है। जिससे यह सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में उन स्थानों पर हिन्दी का साहित्य पढ़ा–लिखा जाता था। जिस समय हिन्दी उत्तर भारतीय अहिन्दी भाषी प्रान्तों में साहित्य की भाषा के रूप में स्थापित हुई थी, लगभग उसी समय दक्षिण भारत में भी वह साहित्यिक अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में स्वीकृत हो चुकी थी। हाँ, तथाकथित हिन्दी भाषा क्षेत्र में हिन्दी के साहित्य की परम्परा कुछ समय पूर्व अवश्य प्रारम्भ हो गई थी। तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में हिन्दी लगभग एक समय में साहित्यिक और सामान्य व्यवहार में राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत हो गई थी और आजतक उसकी यह राष्ट्रीय साहित्यिक परम्परा जीवित है।

यद्यपि हिन्दी भाषा के कुछ व्याकरणिक रूप पालि में मिलते हैं तथापि प्राकृतकाल में उनकी संख्या में और वृद्धि हुई है। अपभ्रंशकाल में ये लगभग 40 प्रतिशत से उपर हो गए, परन्तु हिन्दी भाषा का वास्तविक प्रारम्भ 1000 ई0 से माना जाता है। इसप्रकार हिन्दी के विकास का इतिहास आज तक लगभग पौने दस सौ वर्षों में फैला है। भाषा के विकास की दृष्टि से इस पूरे समय को तीन कालों में बांटा जा सकता है। आदिकाल, मध्यकाल तथा आधुनिक काल।

आदिकाल (1000–1500) : हिन्दी का उद्भव आदिकाल मं ही हुआ था इसलिए हिन्दी भाषा सभी बातों में अपभ्रंश के बहुत अधिक निकट थी। आदिकालिन हिन्दी में मुख्यतः उन्हीं स्वरो–व्यजंनों का प्रयोग मिलता है जो अपभ्रंश में प्रयुक्त होती थीं। अपभ्रंश में केवल आठ मूल स्वर थे – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ। आदिकालिन हिन्दी में दो नए स्वर ऐ, औ भी विकसित हो गए, जो संयुक्त स्वर थे। च, छ, ज, झ संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश में स्पर्श–संघर्षी हो गए।

न, र, ल तथा स संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश में दन्त्य ध्वनियां थे। आदिकाल में ये वत्स्यं हो गयें।

अपभ्रंश में ड़, ढ़ व्यंजन नहीं थे। इनका विकास आदिकाल में हुआ। न्ह, म्ह, ल्ह पहले संयुक्त व्यंजन थे। आदिकाल में ये मूल व्यंजन न, म, ल, के महाप्राण रूप हो गए। आदिकाल में संस्कृत, फ़ारसी आदि से कुछ शब्दों के आ जाने के कारण कुछ नए संयुक्त व्यंजन हिन्दी में आ गए। अपभ्रंश में संयोगात्मक (क्रिया तथा कारकीय रूप) भाषा थीं, वही आदिकाल में हिन्दी में वियोगात्मक (कारक चिन्हों) रूपों का प्राधान्य हो गया था। आदिकालीन हिन्दी प्रयोगों में नपुंसकलिंग का प्रयोग प्रायः पूर्णतः समाप्त हो गया था। हिन्दी वाक्य–रचना में शब्द–क्रम धीरे–धीरे निश्चित होने लगे थे। भक्ति–आंदोलन के प्रारम्भ होने के कारण इस काल में तत्सम शब्दावली कुछ कुछ बढ़ने लगी थी। मुसलमानों के भारत आगमन से हिन्दी भाषा में तुर्की, फारसी, पश्तो आदि के शब्दों के समागमन हुआ। अपभ्रंश के कुछ अप्रचलित व पुराने शब्द हिन्दी शब्द–भंडार से इसकाल में निष्कासित किए गए। आदिकाल में मुख्य हिन्दी साहित्यकार

विद्यापति, नरपति नाल्ह, गोरखनाथ, चंदवरदायी, कबीर आदि हैं। इस काल में मुख्यतः अवधी, ब्रज, मैथिली, डिंगल तथा मिश्रित रूपों का प्रयोग होता था।

मध्यकाल (1500–1800) इसकाल में हिन्दी भाषा व्याकरण के क्षेत्र में पूर्णतः समर्थ हो गई थी। अपभ्रंश के बचे हुए रूप को हिन्दी भाषा ने आत्मसात् कर लिया था। इस काल में उच्च वर्ग के लोगों की हिन्दी में पाँच नए व्यंजन क़, ख़ ,ग़, ज़, फ़ (फ़ारसी के प्रयोग के कारण) आ गए थे। मूल व्यंजन के बाद शब्दांत में 'अ' आने पर लुप्त हो गया अर्थात 'आम' का उच्चारण 'आम्' होने लगा परन्तु संयुक्त व्यंजन में शब्दांत में 'अ' बना रहा। 'ह' के पूर्व का 'अ' कुछ स्थितियों में 'ए' जैसा उच्चारण होने लगा था जैसे अहमद – एहमद। भाषा आदिकालीन भाषा की तुलना में और भी वियोगात्मक हो गई थी। सहायक क्रियाओं एवं परसर्गों के प्रयोग में वृद्धि हो गई । तत्सम शब्दों का प्रयोग भी इसकाल में बढ़ गया। यूरोप से संपर्क होने के कारण फ्रांसीसी, पुर्तगाली, स्पेनी तथा अंग्रेजी शब्द हिन्दी भाषा में आत्मसात् हो गए। फ़ारसी, अरबी, पश्तो, तुर्की आदि की शब्द भी हिन्दी भाषा में समाहित हो गए। इस काल के प्रमुख साहित्यकार सूरदास, मीरा, जायसी, केशव, बिहारी, देव आदि हैं। मध्यकाल में अवधी ब्रजभाषा, दक्खिनी, उर्दू, डिंगल, मैथिली और खड़ी बोली में साहित्य – रचना हुई ।

आधुनिक काल (1800 से अबतक) : आधुनिक काल में 'व' ध्वनि दंतोष्ठ्य के रूप में उच्चारित होती है। हिन्दी के उच्चारण में इस काल में कोई भी शब्द अकरांत नहीं है अर्थात् 'अ' का लोप शब्दांत में हो गया है। इस काल में ज़ तथा फ़ का प्रयोग तो होता है परन्तु क़, ख़, ग़ के स्थान पर क, ख, ग का प्रयोग होने लगा। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार के कारण कुछ नये संयुक्त 'योजना' जैसे ड हिन्दी में प्रयुक्त होने लगे हैं। इस काल में ऑ (डॉक्टर, कॉफी, ऑफिस, कॉलेज आदि) इस काल में ऐ, औ की स्थिति भिन्न हो गई है– (क) पश्चिम हिन्दी – क्षेत्र में ये स्वर सामान्यतः मूल स्वर–रूप में उच्चारित होते हैं (ख) पूर्वी हिन्दी – क्षेत्र में अब भी ये नए, अऑ, (जैसा आदिकाल में होता था) रूप में संयुक्त स्वर के रूप में ही प्रयुक्त हो रहे हैं। (ग) नैया, गैया, कौआ, बौआ जैसे शब्दों में, पश्चिमी तथा पूर्वी दोनों ही क्षेत्रों में ऐ, औ, का उच्चारण क्रमशः अई, अउ रूप में होता है। व्याकरण के दृष्टिकोण से हिन्दी प्रायः पूर्णतः वियोगात्मक भाषा हो गई है। कुछ अपवादों को छोड़कर हिन्दी व्याकरण का मानक रूप सुनिश्चित हो चुका है। इस काल में हिन्दी भाषा, वाक्य रचना, मुहावरों तथा लोकोक्तियों आदि के क्षेत्र में अंग्रेजी से बहुत प्रभावित हो गया है। अंग्रेजी ने विराम चिन्हों के माध्यम से हिन्दी वाक्य रचना को प्रभावित किया हे। हिन्दी भाषा की रूप – रचना तथा वाक्य रचना में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है, जैसे 'मुझे' के स्थान पर 'मेरे को', 'कीजिए' के स्थान पर 'करिए', नहीं जा रहा है' के स्थान पर 'नहीं जा रहा' आदि। शब्द भंडार की दृष्टि से 1800 से 1850 तक हिन्दी शब्द – भंडार लगभग वही था जो मध्यकाल के अंतिम चरण में रहा होगा परन्तु अब ये अंतर था कि हिन्दी भाषा में अंग्रेजी के अधिकाधिक शब्द समाहित होते जा रहे थे 1800 से 1900 ईसवी तक आर्य समाज के प्रचार–प्रसार के कारण तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ा एवं कुछ पुराने तद्भव शब्द परिनिष्ठित हिन्दी से निकल गए। 1900 ई0 के बाद द्विवेदी–काल तथा छायावाद में अनेक कारणों से तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ गया। जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत आदि का पूरा साहित्य तत्सम शब्दों के अपूर्व संग्रह के कारण दर्शनीय है। इसके पश्चात् प्रगतिवादी आंदोलन के कारण तद्भव शब्दों के प्रयोग से पुनः वृद्धि हुई। 1947 के बाद अनेक पुराने शब्द नये अर्थों में प्रचलित हो गये हैं। हिन्दी अब विज्ञान, वाणिज्य, विधि आदि की भी भाषा है इसलिए इसमें पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता भी आन पड़ी जिसकी पूर्ति के लिए अनेक नए शब्द बने एंव अनेक शब्द अंग्रेजी, संस्कृत आदि से लिये गये। 1950 ई0 तक तकरीबन 6 हजार पारिभाषिक शब्द थे परन्तु अब इनकी संख्या एक लाख से भी अधिक है। हिन्दी शब्द – व्यापक होता जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप हिन्दी अपनी अभिव्यंजना में अधिक समर्थ होती जा रही है। हिन्दी की ध्वनि व्यवस्था, रूप–रचना, वाक्य–रचना एवं शब्द भंडार स्थानानुसार सम्पूर्ण भारत में भिन्न है। भारत सरकार या किसी अन्य संस्था ने योजनाबद्ध रूप से हिन्दी साहित्य की अखिल भारतीय परम्परा के उद्घाटन का प्रयास नहीं किया फिर भी विद्वानों के सतत् शोध प्रयासों के परिणामस्वरूप जो सामग्री प्रकाश में आयी है उसे प्रमाणित होता है कि हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि भारत के सभी प्रांतों के कवियों, लेखकों व मनिषियों द्वारा हुई है।

निष्कर्ष

किसी भी भाषा के प्रचार क्षेत्र में ज्यों–ज्यों प्रसार होता है, त्यों–त्यों उसके एकाधिक रूप विकसित होने लगते हैं। हिन्दी भी अपने स्वरूप को स्थानानुसार, कालानुसार परिवर्तित करती रहती है। हिन्दी शब्द–भंडार में द्रुत गति से विस्तार इसकी समृद्धि का सूचक है। हिन्दी भाषा एक ममतामई माँ के समान संपर्क में आनेवाली सभी भाषाओं को आत्मसात् कर लेती है। संविधान के 351वें अनुच्छेद के अनुसार संपर्क भाषा के रूप में जिस हिन्दी का विकास होना है वह कम–से–कम शब्द–भंडार के क्षेत्र में भारत की प्रायः सभी भाषाओं से कुछ–न–कुछ ग्रहण करेगी। इसप्रकार राष्ट्रभाषा के रूप में उसका स्वरूप एकप्रकार से सार्वदेशिक होगा । भारत की अखिल भारतीय भाषाओं की सुदीर्घ परम्परा में आज हिन्दी उसकी स्वाभाविक प्रतिनिधि है। हिन्दी भाषा ऐतिहासिक दृष्टि से तथा वर्तमान स्थिति से भारत की वास्तविक राष्ट्रभाषा है।

संदर्भ सूची

1. कोसाम्बी , डी.डी. (1971), दि कल्चर एंड सिविलाईजेशन ऑफ एनशिएंट इंडिया इन हिस्टोरिकल आउटलाइन, दिल्ली
2. रामचंद्र शुक्ल (1940), हिन्दी साहित्य का इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी (1993), हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
4. धीरेंद्र वर्मा (सम्पा.) (संवत् 2020), हिन्दी साहित्य कोश, भाग–2 ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी, (1952) हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास .....
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी, (2014), द्वितीय संस्करण हिन्दी भाषा का वृहत ऐतिहासिक व्याकरण, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
7. चटर्जी, एस.के. (1960), इंडो–आर्यन एंड हिन्दी (द्वितीय संस्करण), कलकत्ता
8. मिश्र एवं पांडेय (1967), हिन्दी साहित्य का इतिहास भारती भवन, पटना
9. कामेश्वर शर्मा (1962), बोध और व्याख्या, नोवेल्टी एण्ड कम्पनी, पटना
10. www.google.com
11. www.wikipedia.com